नईदुनिया

संपादकीय

माँ के आँचल पर लगे दाग से बच्चे बाहर आ पाएंगे?

कोलकाता की सोनागाछी की तंग गलियों में, जहां दिन भी शाम जैसा लगता है, वहां एक कमरे से बच्चों की हंसी सुनाई देती है। कोई बच्चा रंगों से सूरज बना रहा है, तो कोई पहाड़ा पढ़ रहा है। ये उन माताओं के बच्चे हैं, जिनका नाम सुनकर समाज मुंह फेर लेता है। लेकिन इन बच्चों की हंसी में कोई दाग नहीं है। इनकी आंखों में भी वही सपने हैं, जो हर बच्चे की आंखों में होते हैं। इन्हीं सपनों को सहारा देने के लिए आमरा पादातिक नामक संस्था ने एक ऐसा केंद्र बनाया है, जहां बच्चे दिनभर रहते हैं, खाते हैं, पढ़ते हैं और सबसे बड़ी बात, बिना डर के जीते हैं।

जरा सोचिए, एक बच्चा जब पहली बार स्कूल जाता है और उससे पूछा जाता है कि उसके माता-पिता क्या करते हैं, तो वह क्या जवाब देगा? वह अपनी मां से बेहद प्यार करता है, लेकिन उसके पेशे के बारे में दूसरों को बताने में झिझकता है। कई बार दूसरे बच्चे उसका मजाक उड़ाते हैं और कभी अनजाने में शिक्षक भी ऐसे सवाल पूछ लेते हैं, जिनसे वह शर्मिंदा हो जाता है। धीरे-धीरे वह स्कूल से दूर होने लगता है। क्या यह न्याय है कि जिस परिस्थिति में पैदा होने पर बच्चे का कोई नियंत्रण नहीं, उसकी सजा भी वही भुगते?

उस मां से पूछिए, जो खुद भूखी रहकर बच्चे का पेट भरती है। वह बस यही चाहती है कि उसका बच्चा उसकी तरह जिंदगी न जिए और उसे वे ताने न सुनने पड़ें, जो उसने सहे हैं। लेकिन रोजी-रोटी के लिए उसे काम पर जाना पड़ता है। कई बार बच्चा अकेला रह जाता है, भूखा रहता है और गलत हाथों में पड़ने का खतरा भी बना रहता है। इसी पीड़ा से ऐसी जगहों की जरूरत महसूस होती है, जहां मां अपने बच्चे को सुरक्षित छोड़कर काम पर जा सके और बच्चा अपनी पहचान के बोझ से मुक्त होकर भविष्य के सपने देख सके।

ऐसे केंद्रों में केवल पढ़ाई नहीं होती, बल्कि बच्चों की परवरिश भी होती है। उन्हें पौष्टिक भोजन, शिक्षा, खेल, संगीत, नृत्य, चित्रकला और मार्शल आर्ट सीखने के अवसर मिलते हैं। जब किसी बच्चे को यह भरोसा मिलता है कि वह भी समाज का बराबर का हिस्सा है, तो उसका आत्मविश्वास बढ़ता है। प्यार और सम्मान उसके जीवन की दिशा बदल सकते हैं।

हम अक्सर कहते हैं कि हर बच्चे को शिक्षा का अधिकार है, लेकिन यौनकर्मियों के बच्चों की बात आते ही समाज चुप हो जाता है। क्या वे इस देश के बच्चे नहीं हैं? सरकार को ऐसे क्षेत्रों में विशेष डे-केयर केंद्र खोलने चाहिए, जहां पिता के नाम जैसी औपचारिकताओं के कारण बच्चों का दाखिला न रुके। शिक्षकों को भी संवेदनशील व्यवहार के लिए प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। समाज को बच्चों की पहचान उनके जन्म या माता के पेशे से नहीं, बल्कि उनकी प्रतिभा और कर्म से करनी चाहिए।

सोनागाछी की यह पहल उम्मीद जगाती है कि सही अवसर मिले, तो हर बच्चा अपना भविष्य बदल सकता है। आज जब हम अपने बच्चों को प्यार से सुलाएं, तब उन बच्चों के बारे में भी सोचें, जो अंधेरे कमरों में अपनी मां का इंतजार करते हैं। उन्हें एक किताब, सुरक्षित बचपन और भरोसे का हाथ देना हमारी जिम्मेदारी है। किसी एक बच्चे को भी सम्मान के साथ जीने और खुले आसमान में उड़ने का अवसर देना ही सच्चा जनसरोकार और मानवता है।

आजकल

भोपाल की सड़कों पर कचरे का पहाड़ और हड़ताल पर बैठा सम्मान

जब सफाई करने वाले हाथ रुक गए, तो शहर की सांसें भी थमने लगीं। झीलों और हरियाली के लिए पहचाने जाने वाले भोपाल की सड़कों, मैदानों और गलियों में कचरे के ढेर लग गए हैं। इसकी वजह है सफाई कर्मचारियों की हड़ताल। सुबह चार बजे उठकर शहर को स्वच्छ रखने वाले कर्मचारी आज अपनी मांगों को लेकर काम बंद करने पर मजबूर हैं। यह केवल हड़ताल नहीं, बल्कि शहर की व्यवस्था पर बड़ा सवाल है।

सफाई कर्मचारियों की मांगें लंबे समय से चली आ रही अनदेखी का परिणाम हैं। वे समय पर वेतन, स्थायी नौकरी, सुरक्षा उपकरण, स्वास्थ्य बीमा और अपने परिवार के लिए बेहतर भविष्य चाहते हैं। वर्षों से ठेके पर काम करने वाले इन कर्मचारियों को दस्ताने, जूते और मास्क जैसी बुनियादी सुविधाएं मिलनी चाहिए। उनकी समस्याओं का समय रहते समाधान किया जाता, तो शायद आज यह स्थिति नहीं बनती।

सड़कों पर जमा कचरा केवल बदबू नहीं फैलाता, बल्कि बीमारियों का खतरा भी बढ़ाता है। इसमें मच्छर और मक्खियां पनपते हैं, जिससे डेंगू, मलेरिया और टाइफाइड जैसी बीमारियों का जोखिम बढ़ सकता है। कचरा नालों के माध्यम से झीलों तक पहुंचा, तो पर्यावरण के लिए भी गंभीर संकट पैदा हो सकता है। यह स्थिति स्वच्छता के दावों पर सवाल खड़े करती है।

नगर निगम प्रशासन की जिम्मेदारी है कि वह तत्काल सफाई की वैकल्पिक व्यवस्था करे और कर्मचारियों के प्रतिनिधियों से बातचीत कर उनकी समस्याओं का सम्मानजनक समाधान निकाले। मांगों पर समयबद्ध निर्णय लेने के साथ वेतन, सुरक्षा और सेवा शर्तों में सुधार जरूरी है। दीर्घकालीन समाधान के लिए कचरा प्रबंधन को आधुनिक बनाने और गीले-सूखे कचरे को अलग-अलग एकत्र करने की व्यवस्था मजबूत करनी होगी।

नागरिकों की भी जिम्मेदारी है कि वे कचरा खुले में न फेंकें और सफाई कर्मचारियों का सम्मान करें। भोपाल की यह हड़ताल चेतावनी है कि शहर को स्वच्छ रखने वालों को अनदेखा नहीं किया जा सकता। कचरे के ढेर हटाना जरूरी है, लेकिन उससे भी जरूरी है मन में बैठा भेदभाव हटाना। शहर तभी स्वच्छ रहेगा, जब सफाई करने वाले हाथों को सुरक्षा, सम्मान और स्थायित्व मिलेगा।

वोट किसका और चोट किस पर...

कस्बे से दिल्ली तक गूंज रहा एक ही सवाल

नई दिल्ली में दो नवंबर को शुरू हुई हलचल आने वाले महीनों में देश की राजनीति की दिशा तय कर सकती है। प्रवेश कुमार मिश्र की रिपोर्ट के अनुसार, इंडिया गठबंधन ने इस बार सीधे प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी और गृहमंत्री अमित शाह को निशाने पर लेने की रणनीति बनाई है। विपक्ष का आरोप है कि चुनाव आयोग जैसी स्वायत्त संस्था के कंधे पर बंदूक रखकर लोकतंत्र पर निशाना साधा जा रहा है। इसी कारण अब लड़ाई संसद से आगे कस्बों और गांवों की चौपाल तक ले जाने की तैयारी है। अभियान के तहत मतदाताओं को यह समझाने का प्रयास किया जाएगा कि मुख्य चुनाव आयुक्त ज्ञानेश कुमार केवल चेहरा हैं और असली पटकथा कहीं और लिखी जा रही है।



विपक्षी दल संसद की कार्यवाही बाधित कर मुख्य चुनाव आयुक्त के इस्तीफे की मांग कर रहे हैं। इंडिया गठबंधन का कहना है कि मतदाता सूची से हटाए गए कथित 13.2 करोड़ से अधिक नामों का मुद्दा बेहद गंभीर है। विपक्ष की रणनीति मतदाताओं के बीच जाकर उन्हें जागरूक करने की है। गठबंधन के रणनीतिकारों ने मुख्य चुनाव आयुक्त और केंद्र सरकार के खिलाफ आंदोलन को व्यापक बनाने की योजना तैयार की है। विपक्ष का आरोप है कि प्रधानमंत्री और गृहमंत्री चुनाव आयोग जैसी संवैधानिक संस्था का सहारा लेकर लोकतांत्रिक प्रक्रिया को प्रभावित करने का प्रयास कर रहे हैं।

इस अभियान के दौरान राहुल गांधी और गठबंधन के शीर्ष नेता जनता के बीच यह संदेश पहुंचाने का प्रयास करेंगे कि चुनाव आयोग जैसी संस्थाओं के माध्यम से मतदाताओं की सूची और चुनावी गणित को प्रभावित किया जा रहा है। विपक्ष का आरोप है कि यह किसी एक व्यक्ति का नहीं, बल्कि पूरी विचारधारा का मामला है, जिसमें संस्थाओं को कमजोर कर सत्ता मजबूत करने की कोशिश हो रही है। आंदोलन का अगला चरण उत्तर प्रदेश, पंजाब और उत्तराखंड जैसे चुनावी राज्यों पर केंद्रित हो सकता है, जहां 2027 में विधानसभा चुनाव होने हैं।

दूसरी तरफ, भाजपा ने भी अपनी रणनीति तेज कर दी है। उत्तर प्रदेश विधानसभा चुनाव में सत्ता विरोधी रुझानों का मुकाबला करने के लिए पार्टी के रणनीतिकारों ने आक्रामक अभियान की तैयारी की है। भाजपा समझती है कि विपक्ष के आरोपों का जवाब केवल प्रेस विज्ञप्तियों से नहीं दिया जा सकता, बल्कि जमीन पर सक्रियता बढ़ानी होगी। इसी उद्देश्य से बड़ी रैलियों और सांगठनिक गतिविधियों पर जोर दिया जा रहा है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की जनसभाओं के साथ केंद्रीय गृहमंत्री अमित शाह संगठनात्मक सूक्ष्म प्रबंधन के जरिये पन्ना प्रमुखों को सक्रिय करने और बूथ स्तर पर चुनावी तैयारी मजबूत करने पर ध्यान दे सकते हैं।

भाजपा की एक प्रमुख रणनीति सांसदों और विधायकों की टास्क फोर्स तैयार करना है। त्योहारों के बाद उत्तर प्रदेश में बड़े नेताओं के दौरे तेज होने की संभावना है। प्रधानमंत्री की जनसभाओं और सांगठनिक बैठकों के माध्यम से कार्यकर्ताओं में उत्साह बढ़ाने की कोशिश होगी। मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान और छत्तीसगढ़ जैसे हिंदी भाषी राज्यों के भाजपा सांसदों और विधायकों को भी उत्तर प्रदेश में जिम्मेदारियां सौंपी जा सकती हैं। ये नेता स्थानीय पदाधिकारियों के साथ घर-घर जनसंपर्क अभियान चलाकर विपक्ष के आरोपों का जवाब देने और बूथ स्तर पर संगठन को सक्रिय करने का प्रयास करेंगे।

भाजपा जानती है कि उत्तर प्रदेश में चुनाव केवल मोदी के नाम पर नहीं जीते जाते। जातीय और सामाजिक समीकरण भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसीलिए पार्टी लाभार्थी वर्ग, सामाजिक समूहों और जातीय समीकरणों पर भी ध्यान देगी। आंतरिक सर्वेक्षणों और राजनीतिक परिस्थितियों के आधार पर केंद्रीय नेतृत्व चुनावी रणनीति तैयार कर रहा है।

यह लड़ाई इसलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि अब राजनीतिक मुकाबला केवल दिल्ली या जिला मुख्यालयों तक सीमित नहीं है। कस्बे वह जगह हैं, जहां शहर और गांव दोनों की खबर पहुंचती है। चाय की दुकानों पर मोबाइल से वीडियो देखे जाते हैं और एक अफवाह पूरे जिले में फैल सकती है। इंडिया गठबंधन चाहता है कि मतदाता सूची का मुद्दा हर घर में चर्चा का विषय बने, जबकि भाजपा विकास और राष्ट्रवाद के मुद्दों को जनता तक पहुंचाना चाहती है।

विपक्ष ने इस लड़ाई को संस्था बनाम व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करने की कोशिश की है। उसका कहना है कि वह किसी व्यक्ति के खिलाफ नहीं, बल्कि संस्थाओं की स्वतंत्रता की रक्षा के लिए लड़ रहा है। भाजपा का पलटवार है कि विपक्ष प्रधानमंत्री और गृहमंत्री को निशाना बनाकर संवैधानिक संस्थाओं को बदनाम कर रहा है। यह नैरेटिव की लड़ाई है, जिसमें जनता तक अपना पक्ष प्रभावी ढंग से पहुंचाना दोनों पक्षों के लिए जरूरी होगा।

भाजपा का टास्क फोर्स मॉडल नया नहीं है, लेकिन दूसरे हिंदी भाषी राज्यों के नेताओं को उत्तर प्रदेश में सक्रिय करना एक महत्वपूर्ण प्रयोग हो सकता है। इससे स्थानीय नेताओं को सहयोग मिलेगा, लेकिन बाहरी नेता यदि स्थानीय जातीय और सामाजिक समीकरणों को ठीक से नहीं समझ पाए, तो नुकसान भी हो सकता है।

मतदाता सूची से हटाए गए 13 करोड़ से अधिक नामों का आंकड़ा बड़ा है, लेकिन आम मतदाता के लिए उसका महत्व तभी स्पष्ट होगा, जब उसे अपने आसपास इसका प्रमाण दिखाई देगा। विपक्ष को यह मुद्दा जमीनी स्तर पर प्रभावी ढंग से उठाना होगा, अन्यथा यह प्रेस कॉन्फ्रेंस तक सीमित रह सकता है। अंततः इस राजनीतिक मुकाबले का फैसला बूथ पर होगा। पर्दे के पीछे रणनीति चाहे जो बने, लोकतंत्र में अंतिम निर्णय मतदाता का ही होता है। वही तय करेगा कि इंडिया गठबंधन के आरोपों का जवाब भाजपा की रैलियां दे पाती हैं या नहीं।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

सस्ता मकान अब सपना क्यों बन गया

रियल एस्टेट के दिग्गज निरंजन हीरानंदानी ने जो कहा है, वह केवल एक आंकड़ा नहीं, बल्कि आम आदमी की आर्थिक स्थिति का आईना है। उन्होंने कहा है कि भारत में पचास लाख रुपये से कम कीमत का घर बनाना अब आर्थिक रूप से संभव नहीं रह गया है। यह बात किसी अखबार की सुर्खी नहीं, बल्कि आम आदमी की जेब का सच है। पहले आदमी सोचता था कि नौकरी लगेगी तो घर बनाएंगे, अब वह सोचता है कि घर खरीदने की कोशिश की तो नौकरी छोड़नी पड़ सकती है। कीमतें इतनी बढ़ गई हैं कि किफायती शब्द ही मजाक बन गया है। आज एक करोड़ रुपये का घर भी किफायती कहलाता है। यह कैसी किफायत है, जो आम आदमी की पहुंच से ही बाहर हो गई है?

लोग सोचते हैं कि मकान सीमेंट और स्टील से महंगा होता है, लेकिन हकीकत यह है कि मकान सरकारी प्रक्रियाओं और शुल्कों के कारण भी महंगा होता है। हीरानंदानी ने कहा है कि मुंबई में चालीस हजार रुपये प्रति वर्गफुट की कीमत में से बीस हजार रुपये सीधे सरकार के पास जाते हैं। स्टांप ड्यूटी, जीएसटी, लेबर सेस, विकास शुल्क और न जाने कितने नामों से पैसा वसूला जाता है। यानी घर की कीमत का बड़ा हिस्सा करों और शुल्कों में चला जाता है। सरकार सबको आवास देने की बात करती है, लेकिन उसी आवास पर भारी कर भी लगाती है।

सस्ते मकान का सबसे बड़ा दुश्मन जमीन की बढ़ती कीमतें हैं। शहरों के बीच जमीन आसमान छू रही है और सरकार उसे सबसे ऊंची बोली लगाने वाले को बेच देती है। फिर बिल्डर गरीबों के लिए घर क्यों बनाएगा? वह अमीरों के लिए ऊंची इमारतें बनाएगा। सरकार चाहे तो अपनी जमीन का एक हिस्सा किफायती आवास के लिए आरक्षित कर सकती है, लेकिन राजस्व की प्राथमिकता अक्सर इस जरूरत पर भारी पड़ती है। उद्योगों के लिए जमीन सस्ती दी जाती है, लेकिन गरीब के घर के लिए जमीन महंगी पड़ती है। यही नीति की बड़ी विफलता है।



शहरों के बीच जमीन आसमान छू रही है और सरकार उसे सबसे ऊंची बोली लगाने वाले को बेच देती है। फिर बिल्डर गरीबों के लिए घर क्यों बनाएगा? वह अमीरों के लिए ऊंची इमारतें बनाएगा। सरकार चाहे तो अपनी जमीन का एक हिस्सा किफायती आवास के लिए आरक्षित कर सकती है, लेकिन राजस्व की प्राथमिकता अक्सर इस जरूरत पर भारी पड़ती है। उद्योगों के लिए जमीन सस्ती दी जाती है, लेकिन गरीब के घर के लिए जमीन महंगी पड़ती है। यही नीति की बड़ी विफलता है।

बिल्डर भी सस्ते घर बनाने में रुचि नहीं दिखाते, क्योंकि महंगे घरों में मुनाफे की संभावना अधिक होती है। यदि पचास लाख रुपये के घर में मुनाफा पांच प्रतिशत और एक करोड़ रुपये के घर में पच्चीस प्रतिशत हो, तो बिल्डर महंगे घर बनाना पसंद करेगा। यह सोच बाजार में किफायती आवास की कमी को और बढ़ाती है।

घर खरीदना मुश्किल हुआ है, तो किराये पर रहना भी आसान नहीं है। बड़े शहरों में किराया इतना बढ़ गया है कि आधी तनख्वाह उसी में चली जाती है। इसके बावजूद किरायेदारों को मकान खाली करने की चिंता बनी रहती है। विदेशों में सरकारें किराये के मकान बनाकर कम दरों पर उपलब्ध कराती हैं। भारत में भी ऐसे मॉडल की जरूरत है, ताकि हर व्यक्ति पर घर खरीदने का दबाव न रहे।

सरकार की सबसे बड़ी गलती यह है कि वह घर को राजस्व का साधन समझती है, जबकि घर बुनियादी जरूरत है। सरकार को अपनी जमीन की नीलामी में कम से कम पच्चीस प्रतिशत हिस्सा किफायती आवास के लिए आरक्षित करना चाहिए। ऐसे घर सालाना छह लाख रुपये से कम आय वाले परिवारों को प्राथमिकता के आधार पर दिए जा सकते हैं। किफायती घरों पर करों और शुल्कों का बोझ भी कम किया जाना चाहिए, ताकि उनकी कीमत घट सके।

मकान का नक्शा पास कराने की प्रक्रिया भी सरल और समयबद्ध होनी चाहिए। मंजूरी में देरी से निर्माण लागत और ब्याज का बोझ बढ़ता है, जिसका असर अंततः खरीदार पर पड़ता है। रियल एस्टेट को उद्योग का दर्जा देने और सस्ते ब्याज पर ऋण उपलब्ध कराने की मांग पर भी गंभीरता से विचार होना चाहिए। इसके साथ ही खाली पड़े मकानों को किराये पर उपलब्ध कराने के लिए पारदर्शी व्यवस्था विकसित की जा सकती है।

आज सवाल केवल घर की कीमत का नहीं, बल्कि इस बात का है कि घर किसके लिए है। यदि घर केवल अमीरों की पहुंच में रह जाएगा, तो सबका साथ, सबका विकास का नारा अधूरा रह जाएगा। सस्ता मकान पहुंच से दूर होना केवल रियल एस्टेट की समस्या नहीं, बल्कि देश की सामाजिक और आर्थिक चुनौती है। सरकार को तय करना होगा कि उसे राजस्व के आंकड़े बढ़ाने हैं या लोगों के सिर पर छत सुनिश्चित करनी है। घर ईंट और सीमेंट से ही नहीं बनता, भरोसे से भी बनता है और आम आदमी का वह भरोसा आज टूट रहा है।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

कबीर के बिना अधूरा है भारत का लोकतंत्र

लोकसभा अध्यक्ष ओम बिरला ने संत कबीर महोत्सव में जो कहा, वह केवल एक जिले का समाचार नहीं, बल्कि पूरे देश के लोकतंत्र के लिए एक चेतावनी है। उन्होंने कहा कि असहमति के बावजूद आपसी सम्मान बनाए रखें, वाणी में संयम रखें और आचरण में नैतिकता रखें। यह बात लखीमपुर खीरी में कही गई, लेकिन इसकी गूंज दिल्ली से लेकर दक्षिण भारत तक सुनाई देनी चाहिए, क्योंकि आज भारत का लोकतंत्र एक बड़ी परीक्षा से गुजर रहा है। परीक्षा यह नहीं है कि कौन जीतेगा, बल्कि यह है कि क्या हम हारने वाले का भी सम्मान कर पाएंगे? क्या हम विरोधी को दुश्मन बनाए बिना बहस कर पाएंगे? यहीं पर कबीर छह सौ साल बाद भी हमारे सबसे बड़े शिक्षक बन जाते हैं।

कबीर का जन्म काशी में हुआ और उनका जीवन मगहर तक पहुंचा, लेकिन उनकी वाणी पूरे हिंदुस्तान में फैल गई। इसका कारण यह है कि कबीर ने किसी क्षेत्र की नहीं, मनुष्य की बात की। वे जुलाहा थे और उन्होंने हिंदू तथा मुस्लिम, दोनों समुदायों के पाखंड पर चोट की। पंद्रहवीं सदी में जब समाज जाति और धर्म के नाम पर बंटा था, तब उन्होंने मनुष्य की समानता का संदेश दिया। आज इक्कीसवीं सदी में भी समाज उन्हीं दीवारों में बंटा है। सोशल मीडिया पर जाति के नाम पर ट्रोल किया जाता है, धर्म के नाम पर नफरत फैलती है और भाषा के नाम पर अहंकार दिखता है। कबीर की वाणी आज भी समानता और सामाजिक सद्भाव का संदेश देती है।

भारत विविधता का देश है। यहां भाषा, भोजन और परंपराएं अलग-अलग हैं। इस विविधता को एकता में बदलने का रास्ता प्रेम और संवाद से निकलता है। कबीर की सधुक्कड़ी भाषा विभिन्न भाषाई परंपराओं के मेल का उदाहरण है। आज जब हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं को लेकर बहस होती है, तब कबीर याद दिलाते हैं कि भाषा जोड़ने के लिए होती है, तोड़ने के लिए नहीं। उनका दोहा, 'पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ, पंडित भया न कोय। ढाई आखर प्रेम का, पढ़े सो पंडित होय।' आज की शिक्षा व्यवस्था के लिए भी संदेश है कि ज्ञान के साथ संवेदना और आचरण का होना जरूरी है।

आज लोकसभा और राज्यसभा में बहस से ज्यादा शोर और संवाद से ज्यादा आरोप सुनाई देते हैं। लोकसभा अध्यक्ष का पद सत्ता और विपक्ष, दोनों को साथ लेकर चलने की जिम्मेदारी निभाता है। इसलिए जब ओम बिरला असहमति के बीच गरिमा बनाए रखने की बात कहते हैं, तो यह पूरे देश की संसदीय प्रणाली के लिए संदेश है। कबीर ने काशी के पंडितों से भी सवाल पूछे और मगहर के मौलवियों से भी। उन्होंने व्यंग्य किया, लेकिन घृणा नहीं फैलाई। उनकी आलोचना में भी विवेक और करुणा थी। आज के लोकतंत्र को इसी शैली की जरूरत है। विचारों से लड़ें, व्यक्तियों से नहीं और नीतियों का विरोध करें, लेकिन संवाद के रास्ते बंद न करें।



बिरला ने जिस दोहे का उल्लेख किया, 'बुरा जो देखन मैं चला, बुरा न मिलिया कोय। जो दिल खोजा आपना, मुझसे बुरा न कोय।' वह केवल आध्यात्मिक संदेश नहीं, बल्कि लोकतंत्र को बेहतर बनाने का सूत्र भी है। आज नेता, कार्यकर्ता और सोशल मीडिया उपयोगकर्ता दूसरों में बुराई खोजने में लगे हैं, लेकिन आत्ममंथन के लिए तैयार नहीं हैं। कबीर सिखाते हैं कि आत्मचिंतन से ही विवेक और विनम्रता आती है। सहिष्णुता के बिना लोकतंत्र भीड़तंत्र में बदल सकता है।

कबीर ने श्रम और ईमानदारी को महत्व दिया। उनका दोहा, 'साईं इतना दीजिए, जामे कुटुंब समाय। मैं भी भूखा न रहूं, साधु न भूखा जाय।' जरूरत भर संसाधन और दूसरों के प्रति संवेदना का संदेश देता है। आज जब आर्थिक असमानता और भ्रष्टाचार पर बहस होती है, तब कबीर की यह सीख प्रासंगिक हो जाती है कि मेहनत, संतोष और सामाजिक जिम्मेदारी को जीवन का आधार बनाया जाए।

लखीमपुर खीरी में कबीर स्मृति भवन का शिलान्यास केवल एक भवन का निर्माण नहीं, बल्कि उनके विचारों को आगे बढ़ाने का अवसर है। कबीर किसी एक राज्य या क्षेत्र के नहीं, पूरे भारत के हैं। उनकी वाणी को युवाओं तक पहुंचाने और उनके विचारों के माध्यम से समानता, सद्भाव तथा संवैधानिक मूल्यों की समझ विकसित करने की जरूरत है। सरकार को काशी से मगहर तक कबीर से जुड़े स्थलों को जोड़ने वाले सांस्कृतिक मार्ग की संभावनाओं पर भी विचार करना चाहिए।

कबीर ने कहा था, 'प्रेम गली अति सांकरी, तामें दो न समाय।' लोकतंत्र में भी अहंकार और असहिष्णुता के लिए जगह नहीं होनी चाहिए। भारत दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है, लेकिन उसकी महानता तभी सिद्ध होगी, जब वह अपने सबसे कमजोर नागरिक का भी सम्मान करे। कबीर का रास्ता संसद को सड़क से और सत्ता को समाज से जोड़ता है। छह सौ साल पहले एक जुलाहे ने जो चादर बुनी थी, उसकी प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। जरूरत है कि हम उसकी सीख को अपनाएं और असहमति के बीच भी सम्मान बनाए रखने वाला भारत बनाएं।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)